रजि. नं. पी.बी./जे.एल–/0011/2012-14 RNI No. 26281/74

कृण्वन्तो ओ३म् विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

वर्ष–71, अंक : 9, 29/1 जून 2014 तदनुसार 19 ज्येष्ठ सम्वत् 2071 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

न तत्र सूर्यो भाति

-ले० स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतं भूमीरूत स्युः।
न त्वा वज्रिन्त्सहस्त्र सूर्य्या अनु न जातमष्ट रोदसी।

-सा.उ. 4/4/1/1

शब्दार्थ–हे **इन्द्र** =परमैश्वर्यसम्पन्न! **अनन्त शक्तिः**= सम्पन्न भगवन्, **यत्**:= चाहे तो **ते**= तेरे **शतम्**:= सैंकड़ों **द्यावः**= द्युलोक प्रकाशपुंज हों **उत**= अथवा, **शतम्**= सैंकड़ों **भूमि**= भूमियां भी **स्युः** = हों, किन्तु हे **वज्रिन**= यास्क- शक्तिवाले प्रभो! ये सब **रोदसी**= लोक–लोकान्तर तथा **सहस्रम्**= हजारों **सूर्याः**= सूर्य **जातम्**= सर्वत्र विद्यमान **त्वा**= तुझको **न**= नहीं **अनु+अष्ट**= पहुंच पाते।

व्याख्या– संसार में दो प्रकार के लोक हैं– 1, स्वतः–प्रकाश और 2, परतः–प्रकाश। सूर्य स्वतः प्रकाश है और भूमि–चन्द्रादि परतः प्रकाश है, ये सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं। वेद की परिभाषा में इन्हें द्यौ और पृथिवी, द्यावापृथिवी, द्यौ और भूमि, द्यावाभूमि, सूर्य और चन्द्र आदि विविध नामों से पुकारा जाता है। इनकी महिमा तो देखिए। भूमि पर से करोड़ों वर्षों से मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट–पतंग, सरीसृप, व्याल, भुजंग आदि नाना प्राणी अपनी भोग्य सामग्री ले रहे हैं किन्तु माता वसुन्धरा आज तक भी विश्वम्भरा बनी हुई है, आगे भी बनी रहेगी। भूमि का एक नाम रसा है। सचमुच मधुर तिक्त, अम्ल, कटु, कषाय आदि सारे रस भूमि में हैं। सोना–चांदी–लौहादि धातु–उपधातुओं की खान भी यही है। कहीं मर्मर पत्थर है, कहीं चिकनी मिट्टी है, कहीं रेत है। कहीं छह मील ऊंचा पर्वत मानो आकाश से बातें करने को सिर उठाये खड़ा है, कहीं उतना ही गहरा सागर है। कहीं नदी नालों की कलकल ध्वनि है, तो कहीं समुद्र में उतुंग तरंगें उठ रही है। कहीं सस्यश्यामला मनोहारिणी रम्या मही है तो कहीं तृणविहीन बालुकामय जलशून्य प्रदेश है। संसार के आरम्भ से लेकर आज तक के सारे वैज्ञानिक अपनी शक्ति लगा रहे हैं किन्तु इस ससीम परिच्छिन्न सान्त एक भूमि की सीमा परिच्छेद=अन्त नहीं पा सके और यदि ये सैंकडों हों तो फिर इनकी कितनी महिमा, कितनी गरिमा होगी? मनुष्य इसकी कल्पना नहीं कर सकता।

आओ, द्यौ का तनिक विचार करें। भूमि जहां एक क्षुद्र सा टापू है वहां द्यौ एक विशाल सागर है। हमारा प्रतिदिन का परिचित सूर्य भार में पृथिवी से साढे चार लाख गुना भारी बताया जाता है। कहा जाता है इस सूर्य में हमारी पृथिवी की सी तेरह लाख पृथिवियां समा सकती हैं। वह महान् सूर्य जिससे हमारी पृथिवी उत्पन्न हुई है, द्यौरूपी विशाल सागर में एक तुच्छ कमल सा है। ऐसे क्या इससे भी बड़े असंख्य सूर्य इस द्यौ–सागर में टिमटिमा रहे हैं कहो, या चमचमा रहे हैं कहो।

क्या इनकी शक्ति की कल्पना कर सकते हो? आः!!! वेद कहता है, अनन्त द्यौ और अनन्त भूमि तथा असंख्य सूर्य और लोक मिल कर भी उस महान भगवान को नहीं पहुंच पाते। अर्थात् उसके सामने यह सारा विशाल संसार तुच्छ है। वेद ने स्पष्ट कहा है:–

एतावानस्य महिमाऽतो ज्यायांश्च पुरुषः। यजु.31/3

यह सारा संसार उसकी महिमा का पसारा है, वह पूर्ण तो इससे बड़ा और न्यारा है। भगवान ने इस जहान को पैदा किया है, जैसा कि वेद ने कहा है–

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः।। ऋ. 10/190/3

जगन्निर्माता ने पूर्व की भान्ति सूर्य, चांद, द्यौ, अंतरिक्ष और स्वः = आनन्द की रचना की। बनी वस्तु बनाने वाले को कैसे पावे? इसीलिये कठ ऋषि ने कहा–

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं
नेता विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
तमेव भान्तमनु भाति सर्वं तस्य
भासा सर्वमिदं विभाति।। -कठो 5/15

न वहां सूर्य चमकता है, न चांद तारे, न ही बिजलियां चमकती हैं, यह अग्नि तो कहां से? उसकी चमक के पीछे ही सभी चमकते हैं। उसके प्रकाश से यह समस्त जगत् प्रकाशित होता है। सभी उसके प्रकाश से प्रकाशित होते हैं, तो स्पष्ट है कि ये सब मिल कर उसकी बराबरी नहीं कर सकते। उसकी तुलना का कोई पदार्थ इस ब्रह्माण्ड में नहीं हैं। ये सब मिल कर भी सीमा वाले हैं और वह है असीम। अतएव वह–

विश्वस्य मिषतो वशी। -ऋ. 10/190/2

सभी गति करने वालों का वशी है, नियंत्रणकर्त्ता है। जड़–चेतन, स्थावर–जगंम–चर–अचर सभी उसके शासन में चलते हैं।

इस प्रकार उसे अप्रतर्क्य समझ कर महात्मा चुप हो जाते हैं। ससीम असीम का वर्णन कैसे करे? केवल अनुभव कर सकता है, उसका वर्णन नहीं कर सकता।

-स्वाध्याय संदोह से साभार

कर्मफलभोगव्यवस्था

-ले० श्री डा. रविदत्त शर्मा एम.ए.(वेद) आर्य समाज शामली

'अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्'-गीता

परमात्मा की व्यवस्था के अन्तर्गत जीव स्वतन्त्र रूप से अपने कार्यों को सम्पन्न करता है फिर जैसा जिसका कर्म होता है वैसा ही उसे फल मिलता है। वैदिक धर्मशास्त्र के अन्दर गिने जाने वाले सभी ग्रन्थों की यही मान्यता है कि कर्ता को अपने किये हुए कर्म का फल अनिवार्य रूप से भोगना ही होता है। विभिन्न सम्प्रदायों ने मानवजाति को धोखा देने के लिये स्वेच्छा से सरल नियम बना लिये हैं। गीता माहात्म्य में किसी ने लिखा है कि गीतारूपी गंगा जल को पीकर पुनर्जन्म नहीं होता-'गीता-गङ्गोदकं पीत्वा पुनर्जन्म व विद्यते।' भागवत पुराण में प्रशंसा लिखी है कि भागवत की कथा एक सप्ताह सुनने से मुक्ति हो जाती है-'सप्ताहेन श्रुतं चैतत् सर्वथा मुक्तिदायकम्।' वाल्मीकि रामायण माहात्म्य में भी यही बात लिखी है कि इसके श्रवण अथवा पठन से सब पापों का नाश हो जाता है-'श्रवणात् पठनाद् वापि सर्वपापविनाशकृत्।' साम्प्रदायिक पुस्तकों में किसी व्यक्ति को प्रतिनिधि मानकर उसे अपराध क्षमा करने का ठेका दे दिया गया है; राम और कृष्ण का नाम लेने से ही मुक्ति हो जाती है। यदि मुक्ति इतनी सस्ती हो जाए तो संसार दु:ख क्यों भोगने लगा; थोड़ी-सी कठिनाई आते ही नाम लेकर उसे दूर किया जा सकता है। कागज की नाव से कभी कोई पार हुआ है ? अनुसन्धानकर्ता ऋषिगण इस सम्बन्ध में परामर्श करते हैं कि कोई ऐसा साधन नहीं जो कर्म के फल को निरस्त कर सके; अत वेदोक्त तथ्य ही मानने योग्य है-

न किल्विषमत्र नाधारो अस्ति न यन्मित्रैः सम्ममान एति।
अनूनं निहितं पात्रं न एतत् पक्तारं पक्वः पुनराविशाति।।

-अथर्व० १२.३.४८

कर्मफल व्यवस्था में न तो कोई त्रुटि होती है और न कोई सिफारिश ही चलती है। मित्रों के सहयोग से भी फल नष्ट नहीं होता। कर्मों का पात्र सुरक्षित है, यह पकाने वाले को ही फिर से मिलता है। लोक में जब किसी पापी अत्याचारी को कष्ट होता है तो सब यही कहते हैं कि 'पाप का घड़ा भर गया'। जनसाधारण भी अच्छी तरह जानते हैं कि 'जैसी करनी वैसी भरनी'। किया हुआ कर्म कर्ता का पीछा करता रहता है जैसे हजारों गौओं में बछड़ा अपनी माँ को जा पकड़ता है-

यथा धेनुसहस्त्रेषु वत्सो विन्दति मातरम्।।
तथा पूर्वकृतं कर्म कर्तारमनुगच्छति।।

-महाभारत शान्ति पर्व ७-२२

किसी भी कारण से कर्मफल न्यून नहीं होता और न अधिक ही मिलता है। पात्र में जैसा और जितना भरने वाले ने भरा वैसा और उतना ही उसे मिलेगा। यह कर्मों की खेती है जैसा बोया है वैसा काटना है। मनुष्य जब संसार को छोड़ता है तो सब कुछ यहाँ ही रह जाता है कोई भी अत्यावश्यक सामग्री साथ में नहीं ले जा सकता। केवल किया हुआ ही साथ चलता है। जीव का पाप-पुण्य मृत्यु के उपरान्त भी पीछा नहीं छोड़ता। मरने के बाद धन को कोई और ही भोगता है। शरीर को अग्नि जला देती है या पशु-पक्षी खाते हैं। जीव केवल अपने पाप-पुण्य के साथ शरीर से उत्क्रमण करता है-

अन्यो धनं प्रेतगतस्य भुङ्क्ते क्यांसि चाग्निश्च शरीर धातून्।
द्वाभ्यामयं सह गच्छत्यमुत्र पुण्येन पापेन च वेष्ट्यमानः।।

-महा० उद्योग० ४०-१६

परलोक की यात्रा बड़ी विचित्र है; अकेले को ही करनी होती है। किया हुआ कर्म ही उसका साथी होता है। मरणासन्न व्यक्ति को वेद ने सावधान किया है कि हे जीव तू किसी झमेले में मत पड़-'कृतं स्मर' अपने किये हुए को स्मरण कर। मनुष्य जब आपत्ति में होता है तो वह किसी को लाञ्छन लगाता है कि अमुक के कारण यह कष्ट हुआ परन्तु उसे अपने किये का स्मरण नहीं होता। किसी विद्वान् ने लिखा है कि रोग-शोक-परेशानी-बन्धन-आपत्ति ये सब अपने द्वारा किये हुए अपराधरूपी वृक्षों के फल होते हैं, मनीषियों का ऐसा ही मत है-

रोग शोक परिताप बन्धन व्यसनानि च।
आत्मापराध वृक्षाणां फलान्याहुर्मनीषिणः।।

कर्मफल की व्यवस्था को मनुजी ने और अधिक स्पष्ट किया है। कर्म शुभ और अशुभ भेद से दो प्रकार का होता है। इन दोनों के मन-वाणी-शरीर भेद से पुन: तीन प्रकार के होते हैं। कर्मों की उत्तम-मध्यम-अधम ये तीन गतियाँ होती हैं-

शुभा शुभफलं कर्म मनोवाग्देह-सम्भवम्।।
कर्मजा गतयो नृणामुत्तमाधम-मध्यमा।।

-मनु० ७२-३

मनसा-वाचा-कर्मणा जैसा भी कर्म होगा वैसा ही फल मिलेगा। जिस अंग से कुचेष्टा होगी उसी को दण्ड भोगना होगा। इस विषय में ऋषियों का सुझाव है कि परीक्षण करके कर्म करो। जहाँ थोड़ी भी शङ्का हो उस कर्म का परित्याग ही श्रेयस्कर होगा। जो कार्य अपने वश में है उसमें त्रुटि नहीं होनी चाहिये। विद्वानों से कर्म की दीक्षा लेकर और शास्त्रों का आधार लेकर तब कर्म में प्रवृत्त होना चाहिये। इन्द्रिय विलास हेतु कर्म होगा तो पुण्य नहीं होगा। आत्मा की आवाज को पहचान कर कर्म करने से शुभ होगा-

अव्यसश्च व्यचसश्च क्लिं विष्यामि मायया।
ताभ्यामुद्धृत्य वेदमथ कर्माणि कृण्महे।।

-अथर्व० १६.६८.१

आत्मा और परमात्मा के भेद को जानकर, बुद्धिपूर्वक दोनों के विषय में विचार, वेद को अगुआ करके हम कर्मों को करें। कर्म की कसौटी वेद ही है। यदि वेदज्ञ का मार्गदर्शन व सम्पर्क होता रहे तो श्रेष्ठ कर्म ही होगा। किञ्चित् परीक्षण मनुस्मृति में भी उपलब्ध है-

यत्कर्म कुर्वातोऽस्य स्यात्परितोषोऽन्तरात्मनः।
तत्प्रयत्नेन कुर्वीत विपरीतं तु वर्जयेत्।।

-मनु० ४-१६१

'जिस काम को करने से अन्तरात्मा को प्रसन्नता का अनुभव हो, उसको करने का प्रयत्न करें, उससे विपरीत को छोड़ दें।'

कुछ लोग शंका करते हैं कि बुरा कर्म करने वाले को तत्काल फल क्यों नहीं मिलता ? इसका समाधान यह है कि कर्मों की एक शृंखला होती है, उसी के हिसाब से फल मिलता रहता है। वर्तमान में किया जाने वाला कार्य अभी उस क्रम के अन्तर्गत नहीं आया है। पहले कर्मों का फल माँग लेने पर उसका क्रम आयेगा। एक विद्वान् का कहना है कि घोर पाप कर्म करने पर फल तुरन्त भी मिल जाता है। कुछ कर्मों का फल कालान्तर में मिलता है और कुछ का अगले जन्म में मिलता है। एक हत्यारा कहीं तत्काल मार दिया जाता है। कोई पापी पुलिस के चंगुल में फँस जाता है तो कठोर यातनाएँ भोगनी पड़ती हैं। किसी कुकृत्य करने वाले की कुर्की हो जाती है। कोई डाकू, अपने ही साथियों द्वारा मार दिया जाता है। किसी को कठोर कारावास दिया जाता है तो कोई आर्थिक दण्ड देकर छूट जाता है। बहुत से अपराधियों को मृत्युदण्ड दिया जाता है। हमारे देश में कितने ही आतंकवादी सेना द्वारा मार दिये जाते हैं। अनेकों अत्याचारी शासकों को जनता ने ही मार दिया और सत्ता पलट हो गयी। कभी-कभी दुराचारी को प्रकृति के द्वारा स्वत: ही दण्ड मिल जाता है, महामारी आदि के द्वारा सारे वंश का नाश हो जाता है। कोई भी पापी जो आज सुखी-सम्पन्न है कल वही दीन-हीन हो कर नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है। याज्ञवल्क्य स्मृति में उल्लेख है कि महापातकों से उत्पन्न घोर नरकों को भोगकर महापातकी पुन: पुन: इस संसार में दु:ख से व्याप्त योनियों में जन्म लेते हैं-

महापातकजान् घोरान्नरकान् प्राप्य दारूणान्।
कर्मक्षयात् प्रजायन्ते महापातकिनस् त्विह।।

-याज्ञ० स्मृ० प्रायश्चित्त-२०६

सभी विद्वान् इस विषय से सहमत हैं कि बिना फल का भुगतान हुए कर्म का प्रभाव नष्ट नहीं होता। मनुष्य को पूर्वजन्म का ज्ञान नहीं है इसलिये धोखे में रह जाता है। याज्ञवल्क्य ऋषि का यही मन्तव्य है कि पापी बार-बार मरता है और जन्म लेता है। यह भी नारकीय यातना है। जब तक पाप का थोड़ा भी अंश शेष है तब तक पापी की यही दुर्दशा होती रहती है। मनुजी का मत है कि यदि कोई अधर्म का आचरण करता है तो उसे इस लोक में शीघ्र फल नहीं मिलता जैसे पृथ्वी में बोया हुआ बीज तुरन्त फल नहीं देता।

(शेष पृष्ठ 6 पर)

सम्पादकीय.....

हमारा वर्तमान शैक्षणिक ढांचा

समय परिवर्तनशील है और इसके परिवर्तन की गति बहुत अधिक है। देखना है कि समय के परिवर्तन के साथ-साथ हमारी शिक्षा प्रणाली में भी कोई परिवर्तन हुआ है? यह तो सर्वविदित और सर्वमान्य है कि जिस गति से हमारी नैतिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों में परिवर्तन होता है, ठीक उसी गति से शिक्षा के उद्देश्य में परिवर्तन होता है। हमारा समाज जितना अधिक तथाकथित सभ्य होता जा रहा है, क्या उसी हिसाब से हमारा शैक्षणिक ढांचा बदला है या नहीं? यदि हमारे शैक्षणिक ढांचे में कोई उन्नति हुई है तो वह यह कि आज हमारा विद्यार्थी कक्षा में पढ़ने की अपेक्षा सड़कों पर नारेबाजी करने, हड़ताल करने, जलूस निकालने, तोड़-फोड़ करने अपनी और देश की सम्पत्ति को हानि पहुंचाने को अधिक महत्त्व देता है। क्या इसका सारा दोष विद्यार्थी के सिर थोप देना उचित होगा? यदि इस बात को शांति से बैठकर सोचा जाए तो इसका उत्तर हमें अपने वर्तमान शैक्षणिक ढांचे में ही मिल जाएगा।

प्राचीन काल में विद्यार्थी गुरूकुलों में रहकर शिक्षा प्राप्त करता था। गुरू चरणों में रहकर वह अपना ब्रह्मचर्य जीवन शिक्षा प्राप्त करने में लगा देता था। अन्य कई तरह की शिक्षा के साथ-साथ उसे आध्यात्मिक शिक्षा भी मिलती थी। वास्तव में उस शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थी की आध्यात्मिक उन्नति करना ही था। परन्तु आज हम विद्याथियों को आध्यात्मिक शिक्षा कितनी दे पाते हैं? जिससे उसके अन्दर नैतिक मूल्यों की वृद्धि होती है। इस प्रकार की शिक्षा के लिए हमारे पाठयक्रमों में कितना भाग दिया जाता है? आज की हमारी शिक्षा पद्धति मूल्यविहीन हो गई है। विद्यार्थियों को ऐसी शिक्षा नहीं दी जाती जिससे उसके अन्दर अच्छे गुण विकसित हो सके। अत: आवश्यकता है कि हम अपने पाठ्यक्रमों में आध्यात्मिक तथा नैतिक शिक्षा को उचित स्थान देकर विद्यार्थियों को गलत रास्ते पर जाने से रोक सके।

हमारे देश में ब्रिटिश शासन के समय जो शिक्षा दी जाती थी उसका उद्देश्य था बाबू अर्थात् कलर्क तैयार करना। उसमें नैतिक मूल्यों के लिए कोई स्थान नहीं था। चरित्र निर्माण की ओर इसमें ध्यान नहीं दिया जाता था। ब्रिटिश शासकों का मुख्य उद्देश्य था हमारी संस्कृति तथा मानवीय गुणों को नष्ट करना और ऐसे नवयुवक तैयार करना जो रंग रूप से देखने में भारतीय हो परन्तु उनका रहन-सहन, खान-पान आदि सभी अंग्रेजों की तरह हो। हमारा जो वर्तमान शैक्षणिक ढांचा है उसमें चाहे परिवर्तन किया गया हो परन्तु फिर भी इसका आधारभूत ढांचा वही है जो स्वतन्त्रता से पहले था। बहुत प्रयत्न करने पर भी हम अपनी शिक्षा पद्धति को बदलने में सफल नहीं हो सके और न ही उसमें आध्यात्मिक तथा नैतिक मूल्यों की स्थापना कर सके। गुरू रविन्द्रनाथ टैगोर कहा करते थे कि-*our education has no aim, nor does it incorporate any spiritual or ethical contribution to the greatness of humanity.*''यही नहीं पण्डित मदन मोहन मालवीय जी ने तो इसे *-a purposeless, moralles,unprincipled and baseless education*'' कहा। आज हमारे स्कूलों, कॉलेजों में विद्यार्थियों को वे विषय पढाऐ जाते हैं जिनमें विद्यार्थी की कोई रूचि नहीं होती। इसका दुष्प्रभाव विद्यार्थी पर इस तरह से पड़ता है कि जब वह शिक्षा प्राप्त करके इस संसार में आता है तो वह अपने आपको एक अजनबी की तरह पाता है। इसके लिए विद्यार्थियों की मनावैज्ञानिक परीक्षा होनी चाहिए जिससे उसकी रूचि के अनुसार ही उन्हें विषय दिए जा सकें। इस तरह से हमारा विद्यार्थी अपनी मर्जी के विषय पढ़ेगा और उसे पढ़ाई पूरी करने के पश्चात यह नहीं सोचना पड़ेगा कि वह किस व्यवसाय में अपना जीवन आरम्भ करे। वह आरम्भ से ही उस व्यवसाय के लिए अपने आपको तैयार कर लेगा जिसमें उसे बाद में जाना है। आज की शिक्षा पद्धति में कक्षाओं में विद्याथियों की इतनी भीड़ बढ़ जाती है कि अध्यापकों को विद्याथियों के नाम तक याद नहीं होते। अध्यापक और विद्यार्थी में वे सम्बन्ध स्थापित नहीं हो पाते जिससे अध्यापक विद्यार्थी की प्रत्येक गतिविधि की ओर ध्यान दे सके और उसकी अच्छी और बुरी आदतों का पता कर सके। जब तक अध्यापक और विद्यार्थी के बीच अच्छा तालमेल नहीं हो पाता तब तक आदर्श विद्यार्थी की कल्पना नहीं की जा सकती।

हमारा वर्तमान शैक्षणिक ढांचा इस तरह का बना हुआ है कि विद्यार्थी को दी जाने वाली शिक्षा और उसके क्रियात्मक जीवन के बीच में एक बहुत बड़ी खाई है। जिस समय विद्यार्थी स्कूल या कॉलेज में प्रवेश करता है तो अपने आपको किसी बादशाह से कम नहीं समझता परन्तु वास्तविक जीवन में प्रवेश करते ही उसके सुनहरी स्वप्न रेत के महलों की तरह गिरने लगते हैं। नौकरी के लिए भाग-दौड़ शुरू हो जाती है। वर्तमान समय में हमारा शैक्षणिक ढांचा इस तरह का बन चुका है कि हम युवा पीढ़ी को नैतिक और धार्मिक शिक्षा दे पाने में असमर्थ हैं। आज की युवा पीढ़ी के चरित्र निर्माण की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। उसके चरित्र निर्माण के लिए ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो उसके अन्दर नैतिक मूल्यों की वृद्धि कर सके, उसके अन्दर आत्मिक बल पैदा हो। तकनीकी शिक्षा के साथ-साथ नैतिक शिक्षा को भी पाठ्यक्रम में स्थान मिलना चाहिए। यही नहीं विद्यार्थियों के शारीरिक स्वास्थ्य की ओर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। यह सब उनके व्यक्तित्व की उन्नति में सहायक है।

यदि हम अपनी शिक्षा को वरदान के रूप में देखना चाहते हैं तो हमें अपने वर्तमान शैक्षणिक ढांचे में आवश्यक परिवर्तन करने ही होंगे। शैक्षणिक ढांचे में विद्यार्थी, अध्यापक और संरक्षक तीनों का योगदान रहता है। इनमें से किसी एक भी पक्ष की उपेक्षा करना समूचे शैक्षणिक ढांचे के लिए हानिकर हो सकता है। इस बात का ध्यान शिक्षा के प्रबन्धकों को रखना ही होगा। तभी हम संस्कारवान, नैतिक मूल्यों से पूर्ण, चरित्रवान और देशभक्त पीढ़ी का निर्माण कर सकते हैं।

-प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं
सभा महामन्त्री

नामकरण संस्कार का महत्त्व

-ले० पण्डित वेदप्रकाश शास्त्री, 4-E, कैलाशनगर, फाजिल्का

नामकरण का काल-शास्त्रों के अनुसार ग्याहरवें दिन नाम रखना चाहिए। यदि कारणवश उस दिन न हो सके तों 101वें दिन करें।

नामकरण का महत्त्व-मानव-जीवन में नामकरण का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है। संसार में जितनी भी वस्तुएं हैं चाहे वे जड़ हों या चेतन, उनका कोई न कोई नाम अवश्य है। यदि उनका नामकरण न किया जाए तो उन्हें संबोधित ही नहीं किया जा सकता। जिन नई वस्तुओं का आविष्कार होता है या बनती हैं, पहले उनका नामकरण ही किया जाता है, जिससे उन्हें उस नाम से सम्बोधित किया जा सके। एक दूसरे से भिन्नता प्रकट करने एवं व्यवहार में लाने के लिए वस्तु, स्थान, व्यक्ति, जीव-जन्तु आदि का नामकरण अत्यावश्यक है। महर्षि पतञ्जलि कहते हैं-

व्यवहारार्थं संज्ञाकरणं लोके॥

नामकरण संसार में व्यवहार अर्थात् बुलाने के लिए होता है। जब हम किसी से मिलते हैं तो सबसे पहला हमारा प्रश्न यही होता है कि आपका नाम क्या है ? सभी धर्म, जाति, सम्प्रदाय एवं विभिन्न विचारधाराओं वाले व्यक्तियों में नामकरण, संस्कार अवश्य प्रचलित हैं। हां, नामकरण की विधि, पद्धति, प्रथा, रीति रिवाज में भले ही अन्तर हो। परन्तु इतना निश्चित है कि नामकरण सभी व्यक्ति अवश्य करते हैं क्योंकि इसके बिना हमारा काम चल ही नहीं सकता। कोई अपनी प्रचलित परम्परा के अनुसार करता है और कोई वैसे ही मौखिक रूप से अपनी पसन्द के अनुसार पुकारने लगता है।

नामकरण की सार्थकता-महर्षि दयानन्द ने 'संस्कार विधि' में लिखा है कि बालक-बालिकाओं के नाम सार्थक, सरल, सरस, कोमल और सुस्पष्ट होने चाहिए।

जब हमें बच्चे का नाम रखना ही है तो ऐसा नाम क्यों न रखें जो सार्थक हो, अर्थ ठीक निकले, सरलता से पुकारा जा सके, सुनने में सरस और कोमल हो। पुकारते ही नाम का अर्थ भी समझ आ जाए तभी नामकरण की सार्थकता है।

केवल अपनी पसन्द और रूचि को ही महत्त्व नहीं देना चाहिए अपितु साथ में यह भी देखें कि नाम का कोई उपयुक्त अर्थ भी निकलता है या नहीं ?

कई बार नाम तो सार्थक होता है परन्तु होता बेमेल है। यथा-पार्थ। पृथा का पुत्र अर्जुन। अन्य कोई भी व्यक्ति पार्थ नाम नहीं रख सकता क्योंकि उसकी माता का नाम पृथा नहीं होगा तब वह पार्थ कहलाने का अधिकारी कैसे बन गया ? अत: 'पार्थ' नाम सार्थक होते हुए भी हर एक के लिए नाम रखना उचित नहीं है। राघव भी ऐसा ही शब्द है जो रघुवंश में पैदा हुआ हो, वह राघव कहला सकता है। श्रीकृष्ण यादव थे क्योंकि वह यदुवंश में जन्मे थे। परन्तु यादव नाम कोई भी नहीं रखता क्योंकि आजकल 'यादव' शब्द जाति सूचक बन गया है जबकि 'राघव' शब्द नहीं बन सका।

नाम के उच्चारण में सौम्यता भी प्रकट होनी चाहिए, कर्कशता, क्रूरता नहीं। यथा-चण्डी या चण्डिका, जालिम सिंह या शैतान सिंह।

नाम सोद्देश्य होना चाहिए। जैसे-यदि हम चाहते हैं कि बच्चा नम्र बने तो उसका नाम 'विनीत' रखें, सुशील नामकरण करें।

यथा नाम तथा गुण-सामान्यत: व्यक्ति की यही कामना रहती है कि जैसा बच्चे का नाम रखा गया है उसमें वैसा ही गुण भी हो। परन्तु यह तो भविष्य की बात है कि बच्चे के नाम के अनुसार ही गुण आते भी हैं या नहीं। नाम के विपरीत भी गुण आ सकते हैं। यथा-किसी बच्चे का नाम रखा गया-'विद्या सागर', लेकिन वह निकल गया 'काला अक्षर भैंस बराबर।' विवशत: अब कुछ किया भी नहीं जा सकता। उसे विद्वान् बनाना कष्ट साध्य ही नहीं असम्भव भी है। नाम भी नहीं बदला जा सकता। अब यह अच्छा भला नाम छोड़ कर गुणहीनता सूचक नाम भी कैसे रखा जाए ? ऐसा करना और भी हास्यास्पद होगा। अत: जैसा नाम रखा गया है, वही चलने दिया जाए।

नाम के अनुसार गुण न भी आएं तो भी अच्छे नाम ही रखने चाहिए। यदि नाम के अनुसार गुण नहीं हैं तो क्या हुआ। अन्य अच्छे गुण भी हो सकते हैं। सभी गुणों के आधार पर तो नाम नहीं रखे जा सकते। नाम एक ही होता है और गुण अनेक होते हैं।

कबीर अनपढ़ थे फिर भी उनका काव्य पठनीय है। अनेक तर्कों के द्वारा उन्होंने अन्धविश्वास, रूढ़िवाद, पाखण्ड, आडम्बर, हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य, जातिगत-वर्णव्यवस्था आदि कुरीतियों का खण्डन किया।

कई राजे-महाराजे भी अशिक्षित थे परन्तु राजनीति में अत्यन्त कुशल थे और अपनी कर्त्तव्य परायणता से उन्होंने जनमानस पर अपनी धाक जमा दी।

इस प्रकार पुस्तकीय विधान होने पर भी उन्हें बुद्धिमान, चतुर और कार्यकुशल तो मानना ही पड़ेगा।

निष्कर्ष रूप में हम यही कह सकते हैं कि बच्चों के नाम सुन्दर, सरल और सुबोध होने चाहिए। बुरे नाम पहले से ही क्यों रखें ?

विदेशी संस्कृति का प्रभाव-आज विदेशी सभ्यता-संस्कृति के प्रभाव से जीवन का कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं रहा है। अत: बालक-बालिकाओं के नाम भला कैसे अप्रभावित रहते ? नवीनता, आधुनिकता की चकाचौंध और अन्य लोगों से कुछ विशेष प्रदर्शित करने के चक्कर में फंस कर कई लोग ऐसे नाम रख लेते हैं जो सुनने में आकर्षक प्रतीत होते हैं परन्तु उनका कोई अर्थ नहीं निकलता या ऐसा अर्थ निकलता है जिसे सुनकर हंसी आती है या आश्चर्य होता है। साथ ही नामकरण करने वाले की अज्ञानता भी प्रकट होती है। यथा-टीना, पैंसी, पिंकी, साहिल, आरिफ, महक, टार्जन, रिंकू, टिंकू, पिंकू, सोनू, मोनू, विंकल, मोनिका, सोनिया, किट्टी, डेज़ी, नानू, मिनाली, सोनाली, सुहेल, कबीर, किशमिता, अशमिता, तमन्ना, चाहत, लवलीन, शीनू, शकील आदि इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। पास पड़ोस में देखने पर ऐसे अनेक नाम मिल जाएंगे जिन पर पश्चिमी अथवा इस्लामिक सभ्यता का प्रभाव स्पष्ट झलकता है। ऐसे नाम रखने में लोग गौरव का अनुभव करते हैं। वस्तुत: अपनी सभ्यता और संस्कृति की रक्षा के लिए ऐसे नाम रखने से हमें संकोच करना चाहिए।

निरर्थक नामों का त्याग-महर्षि दयानन्द के आगमन से पूर्व बच्चों का नाम कोई न कोई रखना ही होता था, इसलिए रख लेते थे। क्योंकि इसके बिना उसे पुकारा नहीं जा सकता था। यथा-झंडाराम, गंडाराम, आयाराम, गयाराम, कोदई, बेचन, पंजासिंह, झूलेलाल, मिठाईलाल, शादीलाल, गोबरे, भंगासिंह, तोता सिंह, अंग्रेज सिंह, जट्टूराम, दुखीराम, दुखनलाल, भीखा भाई, भिखारीदास, रेलूराम, पल्टूदास, कालूसिंह, पोपटलाल आदि।

और महिलाओं के-पारोबाई, सत्तोबाई, झुरिया, भीमा, हुक्मी, रक्खो, सुग्गी, धनिया, हिरिया, सन्तो, जट्टूबाई, घनू देवी, मंगलो, परोसिना, बीरमा देवी, जीरो, पन्दो, घिना, सरदरो, सुन्तारानी, नीलो जैसे नाम रखना उस समय आम बात थी। ग्रामीण क्षेत्रों, पिछड़ा वर्ग और अशिक्षित जनता में आज भी ऐसे ही नाम रखे जाते हैं। (क्रमश:)

* आजकल बच्चे के जन्म के पश्चात् उसका पंजीकरण नगरपालिका/ग्राम पंचायत में निश्चित समय के अन्तर्गत कराना अनिवार्य है। अत: शिशु एवं माता के स्वस्थ होने पर नामकरण ग्याहरवें दिन सर्वाधिक उपयुक्त है। यदि चिकित्सीय असमर्थता हो तो 21, 31 दिन बाद भी कर सकते हैं। इनमें कोई दोष नहीं। अन्ध विश्वास में न पड़ें। सरकारी/प्राइवेट हस्पताल भी बच्चे का प्रमाणपत्र देते हैं परन्तु बच्चे का नाम उसी समय लिखते हैं। अत: बच्चे के जन्म के पश्चात् सार्थक, सरल, सुन्दर नाम का चयन कर लें और उसे ही हस्पताल/ग्राम पंचायत/नगरपालिका में दर्ज करवाएं। यही नाम स्कूल में भी प्रविष्ट कराएं। कई व्यक्ति कुण्डली के आधार पर नामकरण करते हैं, पण्डित से पूछते हैं। ऐसे सज्जनों से निवेदन है कि अनेक बार कुण्डली का नामाक्षर ठीक नहीं निकलता, भद्दा निकलता है। ऐसी विषम परिस्थिति में अभिभावक ज्योतिषीय विचार के लिए कुण्डलीय नाम का प्रयोग करें परन्तु स्कूल में प्रवेश के समय सुन्दर नाम का ही प्रयोग करें। कुण्डली में भी एक जन्म नाम और दूसरा प्रसिद्ध नाम होता है। अत: प्रसिद्ध नाम सरल, सुन्दर, सार्थक होना चाहिए तभी नामकरण की सार्थकता है। नाम का चयन जन्म के समय ही कर लें। नामकरण संस्कार/समारोह सुविधानुसार निर्धारित समय पर करें।

'सावधान ! अच्छे-बुरे सभी कर्मों को हर क्षण देख रहा है। प्रभु'

-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून 196 चुक्खूवाला-2 देहरादून

कर्म-फल सिद्धान्त के अनुसार सभी मनुष्य प्रत्येक क्षण कुछ न कुछ कर्म करते हैं। कर्म किये बिना जीवित रहना सम्भव ही नहीं है। यजुर्वेद कहता है कि हे मनुष्य तू कर्म करते हुए 100 वर्षों तक जीवित रहने की इच्छा कर। संसार में सभी जड़-चेतन तत्वों पर जब हम दृष्टि डालते हैं तो सभी हमें कर्म करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। भौतिक जगत की सबसे छोटी इकाई परमाणु है। परमाणु के अन्दर भी इलेक्ट्रान, प्राटोन व न्यूट्रान गति कर रहे हैं। सूर्य, चन्द्र व पृथिवी भी गतिशील हैं। सभी प्राणी प्रत्येक क्षण प्राणों वा वायु को लेते व छोड़ते हैं। इस श्वसन क्रिया के चलने को ही जीवन कहते हैं व इसके रूक जाने का नाम ही मृत्यु है। जो व्यक्ति जितना कर्मशील होता है वह उतना अधिक स्वस्थ, बलवान, बुद्धिमान व दीर्घजीवी होता है। कर्म यदि सत्कर्म है जो जीवन सफल और यदि कर्म सत्कर्म नहीं है तो वह जीवन के लिए हानिप्रद होता है। कई बार हम कुछ ऐसे कार्य भी करते हैं जो सबके सामने नहीं किये जा सकते। ऐसे कार्य प्राय: सत्कर्म न होकर असत्कर्म होते हैं। ऐसे कार्यों में हमारा अज्ञान, बुरे संस्कार व स्वार्थ छुपा रहता है। अज्ञानता में हम सोचते हैं कि हमें कोई देख नहीं रहा है परन्तु हमारी यह सोच क्या ठीक है ? यह सोच ठीक नहीं है। जो लोग ईश्वर के सत्य स्वरूप को नहीं जानते, वह ऐसी गलती जान बूझकर भी करते हैं और अनजाने में भी। आस्तिक लोग जो सच्चे आध्यात्मिक हैं, वह असत्कर्म किसी बुरे संस्कार, स्वार्थ व आत्मा व बुद्धि की सात्विक वासनाओं के क्षीण होने व राजसिक व तामसिक वासनाओं व स्वभाव के प्रबल होने पर प्राय: करते हैं। इसका प्रमुख कारण तो अज्ञान ही है साथ में हमारा भोजन व वातावरण भी इसका कारण होता है। अच्छे गुणों व संस्कारों के लोग बुरी संगति में पड़ जाने पर अपकर्म कर डालते हैं। उन्हें उसका अफसोस तो होता है परन्तु संस्कारों के कारण स्वभाव में इस प्रकार की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है। मनुष्य वा जीवात्मा कई बार संस्कारों व प्रवृत्ति, स्वार्थ, हठ दुराग्रह आदि के कारण बुरे कर्म कर डालता है। दुर्योधन ने महाभारत में कहा था कि मैं जानता हूं कि सत्कर्म या असत्कर्म क्या है परन्तु सत्कर्मों में मेरी प्रवृत्ति नहीं है। असत्कर्म को भी अच्छी प्रकार से जानता हूं परन्तु उनमें मेरी निवृति नहीं है। किसी पदार्थ या प्राणी में मोह होना भी एक प्रकार से असत्प्रवृत्ति होती है। हम जानकर भी उससे ऊपर नहीं उठ पाते। धृतराष्ट अपने पुत्र दुर्योधन की प्रवृत्तियों को जानते थे परन्तु वह उसे इसके लिए प्रताड़ित नहीं करते थे। कई बार देखते हैं कि हमारे समझाने पर हमारी सन्तानें, हमारी बातों के महत्व को समझ नहीं पाती या समझने के बाद उससे होने वाले क्षणिक लाभ को छोड़ नहीं पातीं और परिवार के दीर्घगामी हित में हमें भी मौन रहना पड़ता है। परन्तु हम समझते हैं कि हमें सुखों की अधिक चिन्ता न कर एक बार तो उसके हानि लाभ सन्तानों को बता देने चाहियें। उनका मानना अथवा न मानना, सन्तानों का काम है। हमें अपना कर्तव्य उचित रीति से अवश्य पूरा करना चाहिये।

अब प्रश्न यह है कि जब हम बुरा कर्म यथा झूठ या असत्य भाषण, चोरी करना, अपने लाभ के लिए किसी को न्यायपूर्ण अधिकार से वंचित करना, बलवान होने पर कमजोरों को सताना आदि कार्य करते हैं अथवा इसके विपरीत अच्छे काम करते हैं तो ऐसा कौन है जो हमें देख रहा होता है और जो उसके फल दे सकता है या देता है ? इसका उत्तर है कि इस संसार को बनाने व चलाने वाली सत्ता सर्वव्यापक, सर्वान्तरयामी, सर्वशक्तिमान व सर्वज्ञ है। वह प्रत्येक क्षण हमारे मन के विचारों, आत्मा की भावनाओं व शरीर से किये जाने वाले सभी कर्मों को देख रही होती है और उसे इनका पूरा-पूरा ज्ञान, जैसा कि हमारी आत्मा या मन में होता है, होता है। वह इन कर्मों को क्रियमाण, संचित व प्रारब्ध के रूप में सुरक्षित कर देती है और समय पर हमें उसका फल, सुख या दुख के रूप में देती है। जब हम बुरे कर्म करते हैं तो उससे दूसरे प्राणियों को दु:ख, दर्द, परेशानी, कष्ट व असुविधा होती है। परमात्मा हमारा भी है तो उन लोगों व इतर प्राणियों का भी है जो हमसे पीड़ित हो रहे हैं। वह उस ईश्वर से शिकायत करते हैं कि हम तो इस व्यक्ति का कुछ बिगाड़ नहीं सकते हैं, आप ही इसको दण्ड देकर इसका सुधार करें। परमात्मा को उन पीड़ित व दुखी प्राणियों के दुखों को दूर कर पक्षपात रहित न्याय करना है अन्यथा उनका सत्य पर से विश्वास हट सकता है। यदि वह ऐसा न करे तो ब्रह्माण्ड में जो सुव्यवस्था देख रहे हैं, वह भंग हो जाये। कर्मों के फल देने में अक्षम ईश्वर से फिर कोई क्यों डरेगा ? प्राय: सब पापों में प्रवृत्त होगें। पापों से निवृत्ति केवल ईश्वर के कठोर दण्ड से ही हो सकती है व होती है। ईश्वर का काम मनुष्यों व प्राणियों का सत्य पर विश्वास जमाना है। इसीलिए हमारे प्राचीन ऋषियों ने कहा है कि ''सत्यमेव जयते नानृतम'', इसका अर्थ है कि ईश्वर सत्य की रक्षा करता है। सत्य की रक्षा तभी होगी जब बुरे काम करने वालों को दण्ड दिया जाये। इससे सिद्ध होता है कि बुरे कर्म करने वाले सभी मनुष्यों के कर्मों को ईश्वर हर काल, हर क्षण, हर पल, रात्रि व दिन के समय में देखता है और उचित समय पर उनका दण्ड उन अच्छे व बुरे या पुण्यों व पाप कर्मों के कर्ता को देता है।

अनेक मित्र यह प्रश्न किया करते हैं कि असत्य व बुरे काम करने वाले दुखी देखे जाते हैं, इसका कारण क्या है ? ईश्वर की न्याय व्यवस्था कहां होती है कि जब बुरे कर्म करने वाला पाप करता रहता है और उसके घर-वार, व्यापार, बच्चे व परिवारजन उन्नति करते जाते हैं और सभी सुखी व समृद्ध रहते हैं। इसका उत्तर यह है कि हमारा यह जीवन या मनुष्य योनि कर्म व भोग योनि दोनों ही हैं। हम अपने पूर्व किये कर्मों के फल को भोगते भी हैं और नये कर्मों को भी करते हैं। किसी भी परिवार में कई सदस्य होते हैं। सबका प्रारब्ध व क्रियमाण व संचित कर्म एक जैसे नहीं होते हैं। बुरे काम करने वाले एक या अधिक व्यक्ति होते हैं जबकि उसके परिवार के दूसरे लोगों के कर्म अच्छे व बुरे दोनों हो सकते हैं। उन सबका प्रारब्ध बुरे काम करने वाले परिवार के दूसरे सदस्यों से भिन्न हो सकता है। बुरे कर्म का फल तो उसके कर्ता को अवश्यमेव ही भोगना है यदि वह स्वतन्त्रतापूर्वक कर्मों को करता है। उसके परिवार वाले तो अपने प्रारब्ध व इस जन्म के क्रियमाण कर्मों व पुरूषार्थ का फल भोगने के कारण सुखी व सम्पन्न देखे जाते हैं। दूसरा जो व्यक्ति बुरे कर्म कर रहा है वह उसके संचित होकर प्रारब्ध बन रहा है जिसका फल उसे आगामी पुनर्जन्म में मिलने की सम्भावना होती है। इस जन्म में बुरे कर्म को करने वालों को सुख का मिलना उसके पूर्व जन्म के कर्मों अर्थात् प्रारब्ध के अनुसार होना प्रतीत होता है। अत: किसी को भी कर्म-फल व्यवस्था पर सन्देह नहीं करना चाहिये और अविवेक पूर्वक किसी बुरे काम करने वाले को सुखी देखकर उसका अनुसरण नहीं करना चाहिये। हो सकता उनके साथ उसका बिल्कुल उलटा हो।

ऐसा भी होता है कि एक अल्पज्ञ व्यक्ति यह समझे कि वह छुपकर गुप्त रूप से जो कर्म करता है उसे ईश्वर या अन्य कोई नहीं देख पाता है। उसका ऐसा मानना ठीक नहीं है। परमात्मा सर्वव्यापक है, वह हर स्थान पर है। वह वस्तु के अन्दर, बाहर, हमारे मन व आत्मा के भी अन्दर व बाहर तथा बीच के आकाश व वायु में भी व्यापक है। ईश्वर सर्वज्ञ अर्थात् सर्वज्ञानमय है। (शेष पृष्ठ 6 पर)

पृष्ठ 2 का शेष- कर्मफलभोगव्यवस्था.....

पापी पुन: पुन: अधर्माचरण करता है तो वह पाप उस पापी की जड़ों को काट देता है, उसके लिये कोई सुख का आधार नहीं रहता-

नाधर्मश्चरितो लोके सद्य: फलति गौरिव।
शनैशवर्तमानस्तु कर्तुर्भूतानि कृन्तति।। -मनु० ४-१७२

आज की दुनिया कुछ दूसरी ओर जा रही है। जनसंख्या जितनी बढ़ रही है, मनुष्य उतना ही विपरीत दिशा में जा रहा है। घोर निन्दनीय कर्म को भी पाप नहीं माना जाता, यदि पुलिस की जानकारी में आ जाता है तो अपराध अवश्य है। बड़े-से-बड़े अपराधी भी अपने को निरपराध सिद्ध करने के लिये सबकी आँखों पर पर्दा डालना चाहता है। मनुष्य बजाय अपने को सुधारने के प्रमाणों को नष्ट करने में पूर्ण शक्ति लगा देता है। कानून की पकड़ में कम ही अपराधी आ पाते हैं। अपराधों की वृद्धि विश्व की सबसे बड़ी समस्या है। कोई भी शासनतन्त्र इस का हल नहीं खोज सकता है। यह एक परीक्षण है कि धर्म की उपेक्षा से अशान्ति फैलेगी। धर्मशास्त्रों का अध्ययन और मनन ही इस समस्या का सफल उपाय है। कोई भी मनुष्य भीषण अपराध (पाप) करने से नहीं डरता क्योंकि वह जानता है कि वह यदि कानून से बच जाय तो कोई भी शक्ति उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकती। वेद-शास्त्रों को इतना निष्प्रभावी बना दिया है कि संसार से समाप्त कर देना ही चाहते हैं। यदि दैववश कहीं औपचारिकता है भी तो उससे कुछ लाभ नहीं होता। एक व्यक्ति गीता पढ़ता है परन्तु अपने कार्यक्षेत्र में वह गीता का हस्तक्षेप सहन नहीं करता। धार्मिक स्थलों में भी शास्त्रों का उल्लङ्घन हो रहा हो तो फिर कौन विश्वास करेगा ? दण्ड विभाग भी प्रत्येक को तो सुधार नहीं पायेगा क्योंकि ओझल होने की कला सबको आती है। ऐसी स्थिति में कर्म के फल से कोई नहीं डरता। धार्मिक मान्यताओं को पिछड़ापन समझा जाता है। किसी भी खराबी को शास्त्र के प्रमाण से ठीक नहीं किया जा सकता। इन्द्रियों की वासनाओं के आधार पर जीने वाला व्यक्ति यह नहीं समझ पाता कि वह दुष्कर्मों के बन्धन में जकड़े जा रहा है। अन्य जीव एक ही इन्द्रिय के असंयम से मारे जाते हैं। मृग शब्द के आकर्षण से आखेटक के जाल में फँस जाता है। हाथी त्वचा के स्पर्श से मारा जाता है। पतङ्ग प्रकाश पर न्योछावर हो जाता है। भौंरा सुगन्ध में लिप्त होने से मारा जाता है। मछली जिह्वा के स्वाद से मारी जाती है फिर मनुष्य क्यों न मारा जाय-

कुरङ्ग-मातङ्ग-पतङ्ग-भृङ्ग-मीना हता पञ्चभिरेव पञ्च।
एक: प्रमादी सकथं न हन्यते य: सेवते पञ्चभिरेव पञ्च।।

प्रथम प्रयास द्वारा महर्षि देव दयानन्द जी का जीवन नाटक प्रस्तुत

आर्य सद्भावना सत्संग समिति अमृतसर की संचालिका डा. स्वामी मधुरानंदा सरस्वती जी के पंजाब में प्रथम प्रयास द्वारा महर्षि देव दयानन्द जी का जीवन नाटक प्रस्तुत किया गया। इसमें मनदीप कौर डायरैक्टर आल्फाल थिएटर आर्गेनाइजेशन के 30 कलाकारों ने अलग-अलग चरित्र चित्रण गुरू भवन में पेश किया। शहर के गणमान्य लोगों के साथ-साथ पंजाब के अतिरिक्त अन्य राज्यों से भी लोगों ने इस कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। कार्यक्रम डा. दिव्यानन्द सरस्वती की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। प्राचार्या रिपुदमन मल्होत्रा गुरू हरिकृष्ण इंटरनैश्नल विशेषातिथि के रूप में पहुंची। आने वाली पीढ़ी स्वामी जी के जीवन को जान सके इसलिए महर्षि के जीवन को कलाकारों से प्रस्तुत करवाया गया।

इस मौके पर स्वामी आत्मदीक्षिता जी इंदौर, स्वामी विशोका यति जी हिसार, स्वामी सूयदेव जी बठिंडा, सुरेश अग्रवाल अहमदाबाद के अलावा राज्य के विभिन्न शहरों के गणमान्य लोगों ने हिस्सा लिया। उल्लेखनीय है कि बी. बी. के. डी. ए. वी. कॉलेज फार वूमैन की पूर्व प्राचार्या सुदेश अहलावत लुधियाना से गणमान्य लोगों को लेकर पधारीं।

आर्य समाज मॉडल टाऊन जालन्धर, आर्य समाज मॉडल टाऊन अमृतसर, सुरेश अग्रवाल, माता सीता खन्ना जी, माता जगदीश, सुधीर जी ठुकराल, पूनम गुप्ता, रेनु घई, ऋचा सचदेव, वीना व अन्यों ने कार्यक्रम में सहयोग दिया। अंत में आए हुए सहयोगियों तथा मेहमानों को सम्मानित किया गया।

पृष्ठ 5 का शेष- सावधान! अच्छे-बुरे.....

अपनी सर्वज्ञता से वह मनुष्य के सभी अच्छे व बुरे कर्मों को, भले ही मनुष्य उस कर्म को छुपा कर या गुप्त रूप से करे, ईश्वर देखता व जानता है तथा उसकी दृष्टि से बच नहीं सकता। मनुष्य की यह भूल है कि वह यह समझता है कि उसे कोई देख नहीं रहा है, ईश्वर भी नहीं, और उसे उसके बुरे काम का फल नहीं मिलेगा। ऐसा मानना उसका अज्ञान है जिसके लिए उसे कोई छूट प्राप्त होने वाली नहीं है। अपने किये हुए अच्छे व बुरे कर्मों के फलों को तो प्रत्येक जीवात्मा को जन्म-जन्मान्तर धारण करके अवश्य भोगना ही पड़ेगा। यहां यह प्रश्न भी विचारणीय है कि जिस ईश्वर ने विशाल ब्रह्माण्ड को बनाया व उसको चला रहा है क्या वह कर्म फल देने में असमर्थ हो सकता है, इसका उत्तर कदापि नहीं, शब्दों से मिलता है।

ईश्वर के आंख, अन्य इन्द्रियां व मन आदि अन्त:करण न होने पर भी वह हर क्षण व हर समय, रात्रि व दिन में सब जीवों के कर्मों को देखता है व यथासमय दण्ड देता है, इसे बहुत से लोग स्यात् स्वीकार न करें। परन्तु जब हम ईश्वरोपासना करते हैं तो आंखें बन्द कर ही करते हैं और आंखें बन्द रहने की अवस्था में ही ईश्वर का प्रत्यक्ष अथवा साक्षात्कार होता है। यह अल्पज्ञ जीवात्मा का आंखें बन्द करके, बिना आंखों के दर्शन, प्रत्यक्ष व साक्षात्कार का होना यह बताता है कि ईश्वर को सृष्टि की उत्पत्ति करने, उसको चलाने व जीवात्माओं के कर्मों पर दृष्टि रखने वा उन्हें कर्मों का फल देने के लिए भौतिक नेत्रों की किंचित आवश्यकता नहीं है। इसे इस प्रकार भी समझ सकते हैं कि माता के गर्भ में पूर्ण अन्धकार होता है फिर भी ईश्वर की व्यवस्था से एक शिशु 10 हिन्दी महीने में बनकर पूरा हो जाता है। ईश्वर जब उस अन्धकार में मनुष्य के सभी अंग-प्रत्यंग भली प्रकार बना सकता है तो जीवात्मा के कर्मों को भी देख कर दण्ड देने में उसे किसी भी प्रकार से कोई बाधा नहीं है। अब हमें देखना है कि हम कैसे कर्म करें। अच्छे करेंगे तो पुण्य के भागी होंगें और हमारी उन्नति होगी। यदि इसके विपरीत कुछ करते हैं तो उसका परिणाम भविष्य में हमारे लिए अच्छा नहीं होगा।

कर्म-फल सिद्धान्त से जुड़ी एक सत्य घटना प्रस्तुत है जो आर्य जगत के प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री कंचन कुमार ने स्थानीय आर्य समाज, देहरादून के उत्सव में 12 नवम्बर 2011 को सुनाई थी। इस घटना ने हमें अन्तरतम तक झकझोर दिया था। उन्हीं के शब्दों में घटना प्रस्तुत हैं-''मुझे एक कन्या लुधियाना में मिली। हम एक विवाह में वहां गये थे। इतनी सुन्दर कन्या शायद मैंने कभी देखी हो। लेकिन जब वह पास आकर बैठी तो चीजों को टटोल-टटोल कर देख रही थी। मुझे लगा कि इसकी आंखों में दृष्टि नहीं है। यदि कोई उस कन्या को दूर से देखे तो कह नहीं सकता कि उसकी आंखों में दृष्टि नहीं है। मैंने उससे पूछा कि बेटा, आंखों की रोशनी कैसे गई, बचपन में या जन्म से। वह बोली कि नहीं पण्डित जी, मैं 6-7 साल तक खूब अच्छा देखती थी। धीरे-धीरे यह रोशनी कम होती गई और अब इस उम्र में मुझे दिखाई देना बिल्कुल बन्द हो गया। मैंने पूछा, क्या लगता है जब भगवान के दरबार में बैठती हो। कहने लगी पण्डितजी, जब मैं कभी सन्ध्या या पूजा करने बैठती हूं, तो लगता है कि मेरे कर्मों का फल इसी जन्म में मुझे मिल गया। मैंने पूछा बेटा तुम्हे यह कैसे पता लगा ? कर्मों का फल तो परमात्मा देता है। उस कन्या ने एक घटना बताई जो उसके अन्दर बैठी हुई है। वह कहने लगी कि जब वह छोटी थी तो बरसात में उसने एक पेड़ के नीचे चिड़िया के छोटे बच्चे को पकड़ लिया। उस बच्चे को हाथ में लिया और एक तिनका लेकर उसकी एक आंख उसने फोड़ दी। बचपन का समय था, हम सोचते थे कि खेल है, लेकिन अनजाने में किया गया कर्म, वह कहती है कि मुझे आज ऐसे देखना पड़ेगा, सोचा भी न था। वह घटना मुझे याद आती है। मैंने उससे कहा कि बेटा आगे अच्छा करो।'' पण्डित कंचन कुमार ने कहा कि जैसा तुम पकाते हो वैसा ही खाने को मिलता है और जैसा तुम बुनते हो वैसा ही पहनने को मिलता है। उन्होंने एक बैंक के कैशियर व किसान की कथा सुनाकर कहा कि बैंक से पैसे उसी को मिलते हैं जिसने पहले जमा किये होते है। इसे बताकर पण्डित जी ने कहा कि इस जीवन में पहले जमा कराओगे तभी अगले जीवन में मिलेगा। इन घटनाओं को सुनाकर उन्होंने एक कर्म-फल सिद्धान्त पर प्रभावशाली भजन प्रस्तुत किया जिसके बोल थे-'कर्मों की है ये माया, कर्मों के खेल सारे। कर्मों के इस जहां में, क्या-क्या अजब नजारे।' हम अनुभव करते हैं कि यह घटना कर्म-फल सिद्धान्त से अनभिज्ञ व विमुख लोगों का मार्ग दर्शन कर सकती है। हम पाठको से आग्रह करते हैं कि वह महर्षि दयानन्द के वैदिक साहित्य को पढ़कर ईश्वर व जीवात्मा के स्वरूप व कर्म-फल सिद्धान्त को जानकर अपना जीवन सफल करें।

आर्य समाज के तपोनिष्ठ संन्यासी स्वामी सुमेधानन्द जी सरस्वती सीकर से सांसद निर्वाचित

आर्य जगत को यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता होगी कि आर्य समाज के तपोनिष्ठ संन्यासी स्वामी सुमेधानन्द जी सरस्वती सीकर (राजस्थान) से सांसद चुने गये हैं। आपका कार्यक्षेत्र सीकर जिला तथा चुरु, हनुमानगढ़, श्रीगंगानगर, बीकानेर व जयपुर जिलों में विशेष प्रभाव के कारण राजस्थान की मुख्यमंत्री श्रीमती वसुन्धरा राजे सिंधिया ने सीकर क्षेत्र से सांसद का चुनाव लड़ने के लिये टिकट दिया। आप 2 लाख, 50 हजार से अधिक मतों से विजयी हुये। आपने सीकर जिले व राजस्थान में सन् 1996 में नशाबंदी का विशेष अभियान चलाया। तत्पश्चात सन् 1997 में आपने ग्राम पिपराली में वैदिक आश्रम की स्थापना की। वैदिक आश्रम को केन्द्र बना कर इसक्षेत्र में विशेषकर युवा पीढ़ी को शिक्षित व संस्कारित करने का अभियान चलाया गया। अब तक राजकीय तथा निजी विद्यालयों व महाविद्यालयों में अनेकों योग शिविर, संस्कार शिविर, व्याख्यान माला, साहित्य वितरण आदि के माध्यम से हजारों विद्यार्थियों को संस्कारित किया गया। विद्यार्थियों में राष्ट्रभक्ति के साथ साथ माता पिता व गुरुजनों के प्रति श्रद्धाभाव पैदा किया। हजारों युवकों ने नशामुक्ति का संकल्प लिया। ग्रामीण क्षेत्र में यज्ञ व योग के माध्यम से अनेक आयोजन किये। गोरक्षा अभियान चलाया गया। इस क्षेत्र में मृत्युभोज, अस्पृश्यता व नशे जैसी बुराइयों को छुडाने हेतु आप ने अनेक बड़े बडे सम्मेलनों का आयोजन किया। जिन में हजारों की उपस्थिति होती रही। आपके सीकर (राजस्थान) से लोकसभा के लिये निर्वाचित होने पर आर्य समाज अपने आप को गौरवान्वित महसूस कर रहा है।

स्वामी सुमेधानन्द जी सरस्वती समय समय पर आर्य समाज के सर्वोच्च संगठनों एवं कई अहम पदों पर भी विराजमान रहे। आप सन् 1975 से ही अध्ययन कार्य के साथ साथ सामाजिक व राजनीतिक कार्यों में सक्रिय रहे। आप ने 1975 से लेकर 1980 तक हरियाणा के हिसार को केन्द्रित कर कार्य किया। इस अवधि में अनेक महापुरुषों का आप को सान्निध्य मिला। पिछले 30 वर्षों से आप गौ सेवा के कार्यों में पूरी तरह से सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। इस बीच आप ने अनेक गौशालाओं की स्थापना की और उनका संचालन किया।

आर्य समाज हिरणमगरी (उदयपुर) का वार्षिक चुनाव सम्पन्न

आर्य समाज हिरणमगरी की वार्षिक साधारण सभा की बैठक सम्पन्न हुई जिसमें समाज सेवी भंवरलाल आर्य पुन: निर्विरोध प्रधान चुने गए। ललिता मेहरा मंत्री निर्वाचित हुए। निर्वाचन अधिकारी डॉ. अशोक आर्य की देखरेख में सम्पन्न चुनावों में उपप्रधान श्री अनन्तदेव शर्मा, कृष्ण कुमार सोनी, उपमन्त्री संजय शांडिल्य, भूपेन्द्र शर्मा, कोषाध्यक्ष प्रेम नारायण जायसवाल, प्रचार मन्त्री रामदयाल, पुस्कालयाध्यक्ष दिनेश अग्रवाल निर्वाचित किए गए। डॉ. अमृतलाल तापड़िया, डॉ. शारदा गुप्ता, श्रीमती नूतन चौहान, मुकेश पाठक को अन्तरंग सदस्य बनाया गया। **-रामदयाल प्रचार मन्त्री**

आर्य समाज जीरा में महात्मा हंसराज जयन्ती

आर्य समाज जीरा जिला फिरोजपुर में 19 अप्रैल 2014 को महात्मा हंसराज जी का जन्मदिवस बड़ी धूमधाम से मनाया गया। वेद के पवित्र मन्त्रों से हवन यज्ञ श्री सुभाष चन्द्र आर्य ने करवाया। उसके पश्चात आर्य समाज के बुजुर्ग प्रधान श्री ओम प्रकाश ग्रोवर ने महात्मा जी के जीवन पर विस्तारपूर्वक रोशनी डाली। उन्होंने बताया कि उनका जीवन बहुत ही सादा था और उन्होंने डी.ए.वी. की स्थापना की थी। आज भारतवर्ष में डी.ए.वी स्कूलों का जाल सा बिछा हुआ है। यह सब उनके तपस्वी जीवन के कारण है। शांतिपाठ के पश्चात प्रसाद वितरण किया गया। **-देशबन्धु टण्डन मन्त्री आर्य समाज**

प्रवेश सूचना

आर्ष कन्या गुरूकुल दाधिया राजस्थान राज्य के अलवर जिले में साबी नदी के किनारे स्थित एक रमणीक संस्था है। यह गुरूकुल दिल्ली से 100 किलोमीटर एवं जयपुर से 150 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है तथा वर्तमान में कन्याओं की शिक्षा का सर्वोत्तम केन्द्र है। अत: आपसे निवेदन है कि आप गुरूकुल में अधिक से अधिक संख्या में कन्याओं को प्रवेश दिलाकर आर्ष सिद्धान्तों के प्रचार प्रसार में योगदान दें। गुरूकुल की विशेषताएं-1. कक्षा 6 से 9 तक तथा 11वीं व शास्त्री प्रथम वर्ष में प्रवेश प्रारम्भ। 2. महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक से मान्यता प्राप्त। 3. विस्तृत भू-भाग एवं आधुनिक सुविधायुक्त विशाल भवन। 4. पौष्टिक भोजन, कम्प्यूटर शिक्षा, योग्य एवं अनुभवी आचार्यगण तथा शान्त एवं रम्य वातावरण और 24 घंटे बिजली हेतू सौर उर्जा संयंत्र उपलब्ध है। **-सम्पर्क करें-आचार्य प्रेमलता आर्ष कन्या गुरूकुल**
फोन नम्बर-01495-270503 मो.-09416747308

देव काव्य धारा

आर्य समाज के मिशनरी लेखक व समाजसेवी देवराज आर्य मित्र द्वारा लिखित देव काव्य धारा में ईश्वर भक्ति, आर्य महापुरूष, हिन्दी नारी, मद्यनिषेध, यज्ञोपवीत आदि विषयक अनेक गीतों का समावेश है। पुस्तक संग्रहणीय है।

पुस्तक का नाम-देव काव्यधारा
मूल्य सत्याचरण, पृष्ट- 32
पता-राकेश आर्य डब्ल्यू.जेड-428 हरीनगर नानकपुरा नई दिल्ली-64

आर्य समाज हरि नगर सी-13 नई दिल्ली का वार्षिक उत्सव

आर्य समाज हरी नगर सी नई दिल्ली का वार्षिक उत्सव दिनांक 11,12,13 अप्रैल 2014 को धूमधाम से मनाया गया। इस कार्यक्रम में सभी आर्य पुरूषों तथा विद्वान् महानुभावों ने पधार कर कार्यक्रम की शोभा को बढाया। सभी धर्मप्रेमी सज्जनों ने विद्वानों के प्रवचनों का श्रवण कर धर्मलाभ प्राप्त किया। **-देवराज आर्य मित्र**
प्रचाराध्यक्ष आर्य समाज हरि नगर

दयानन्द पब्लिक स्कूल लुधियाना में नया सत्र शुरू

दयानन्द पब्लिक स्कूल के हाल में मासिक एवं नए सत्र की शुरूआत में बृहद हवन यज्ञ का आयोजन किया गया। माता जनक आर्या ने बड़ी श्रद्धा से हवन यज्ञ करवाया और बच्चों को मन्त्रों का अर्थ समझाते हुए अच्छे मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। उन्होंने कहा कि परमात्मा एक है उससे बड़ा कोई भी नहीं। हमें सभी कार्य उसको याद करके करने चाहिए। इसके पश्चात स्कूल के प्रधान श्री संत कुमार जी ने बच्चों को सम्बोधित करते हुए कहा कि आप सबको अपने अध्यापकों का कहना मानना चाहिए और खूब मन लगाकर पढ़ना चाहिए ताकि जीवन में निरन्तर आगे बढ़ते रहें और अच्छे नागरिक बनें। यज्ञ में स्कूल प्रबन्धक समिति के सदस्य भी शामिल हुए जिनमें श्री सतपाल नारंग कोषाध्यक्ष, श्री रमाकान्त महाजन, श्री हर्ष आर्य आदि उपस्थित थे। शांतिपाठ के पश्चात यज्ञ शेष बाँटा गया। **-सुनीता मलिक प्रिंसिपल**

प्रेम भारद्वाज 21वीं बार आर्य समाज के प्रधान नियुक्त

समूचे हाऊस ने टीम के गठन के अधिकार नवनियुक्त प्रधान को सौंपे

आर्य समाज घास मंडी शहीद भगत सिंह नगर (नवांशहर) का वार्षिक अधिवेशन दिनांक 25 मई 2014 को आर्य समाज के प्रधान व आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर के महामंत्री श्री प्रेम भारद्वाज की अध्यक्षता मे आयोजित किया गया जिसमे प्रेम भारद्वाज को लगातार 21वीं बार आम सहमति से प्रधान पद के लिये नियुक्त किया गया। चुनाव अधिकारी सुरेन्द्र मोहन तेजपाल की देखरेख मे आयोजित हुये चुनावों में नवनियुक्त प्रधान प्रेम भारद्वाज को समूचे हाऊस ने अपनी टीम के गठन के अधिकार भी सौंपे। नवनियुक्त प्रधान श्री प्रेम भारद्वाज ने समूचे हाऊस का आभार व्यक्त करते हुये कहा कि जो विश्वास समूचा हाऊस उन पर प्रकट कर रहा है उसके लिये वह समूचे हाऊस के ऋणी हैं तथा विश्वास दिलाते हैं कि निष्काम व निस्वार्थ भाव से अपनी सेवाएं समूचे आर्य समाज के उत्थान के लिये जारी रखने का हर संभव प्रयास वह करते रहेंगे। इस अवसर पर श्री विनोद भारद्वाज, मंत्री आर्य समाज जिया लाल शर्मा, एडवोकेट देशबन्धु भल्ला, एडवोकेट जे.के.दत्ता, ललित शर्मा, वरिन्द्र सरीन, ललित मोहन पाठक, अक्षय तेजपाल, एडवोकेट अमित शर्मा, अरविन्द नारद, सुरेश गौतम, के.के. गोयल, डा.ए.के. राजपाल, डा. प्रदीप अरोड़ा व भास्कर कुमार इत्यादि उपस्थित थे। इससे पूर्व आर्य समाज मंदिर में साप्ताहिक हवन यज्ञ का आयोजन आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महामंत्री श्री प्रेम कुमार भारद्वाज के सान्निध्य में किया गया । पं.अमित शास्त्री ने वैदिक हवन यज्ञ करते करवाते हुये वेदों के महत्व पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि लोगों में आर्य समाज के प्रति यह भ्रान्ति पाई जाती है कि आर्य जन देवताओं को नहीं मानते हैं जोकि सरासर गलत है तथा इस तरह की भ्रान्तियों को दूर करने की आवश्यकता है। अपने सम्बोधन में नव निर्वाचित आर्य समाज के प्रधान श्री प्रेम भारद्वाज जी ने कहा कि इस आर्य समाज की ओर से कई फ्री मैडीकल चैकअप कैंप का आयोजन भी समय समय पर किया जाता रहा है। इस दौरान चैकअप करवाने के लिए आने वाले मरीजों के जरूरी टेस्ट भी मुफ्त किये जाते हैं। उन्होंने कहा कि आर्य समाज नवांशहर हमेशा ही जन कल्याण व समाज से जुड़े कार्यों को करने में आगे रहा है। समाज द्वारा हर साल इस तरह के मैडीकल व रक्तदान कैंप आदि लगाए जाते हैं। आर्य समाज की ओर से डाक्टरों की टीम को भी सम्मानित किया जाता है।

आर्य समाज नवांशहर के प्रधान निर्वाचित होने के बाद अपने सहयोगियों के साथ श्री प्रेम भारद्वाज जी।

गुरुकुल का आयुर्वेद महान
घर-घर में मिले रोगों से निदान

गुरुकुल च्यवनप्राश
सभी के लिए स्वादिष्ट,
रुचिकर, पौष्टिक रसायन।

गुरुकुल पायोकिल
पायोरिया की आयुर्वेदिक औषधि
दांतों में खून रोके, मुंह की दुर्गन्ध दूर करे,
मसूड़ों के रोग, ढीले दांत ठीक करे।

गुरुकुल शतशिलाजीत सूर्यतापी
पुष्टीदायक, बलवर्धक
शरीर में नया खून और उत्साह का अनुभव

गुरुकुल ब्राह्मी रसायन
बुद्धिवर्धक, स्फूर्तिदायक, दिमागी कमजोरी दूर करे।

गुरुकुल मधुमेह नाशिनी गुटिका
मधुमेह एवं प्रत्येक प्रकार के प्रमेह में लाभदायक

गुरुकुल मधु
गुणवत्ता एवं ताज़गी के लिए

गुरुकुल चाय
खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएंजा व
थकान में अत्यंत उपयोगी।

अन्य प्रमुख उत्पाद
गुरुकुल द्राक्षारिष्ठ
गुरुकुल रक्तशोधक
गुरुकुल अश्वगंधारिष्ट

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार डाकघर : गुरुकुल कांगड़ी-249404, ज़िला-हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : 0134-416073

शाखा कार्यालय : 63, गली राजा केदार नाथ, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, फोन : 23261871

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा आर. के. प्रिंटर्स प्रैस, टाण्डा फाटक जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।